अध्याय - 1
भारत के संसाधन (I)
(मृदा, जल, वन एवं वन्यप्राणी)

हम पढ़ेंगे

1.1 संसाधन से आशय, महत्व एवं प्रकार।

1.2 मृदा : मृदा की बनावट, प्रकार, वितरण और उसका संरक्षण।

1.3 जल : जल के स्त्रोत व उसके प्रकार, वितरण और जल-संरक्षण।

1.4 वन : वन एवं वन्य प्राणियों की उपयोगिता व उनका संरक्षण।

1.5 वन्यप्राणी : विलुप्त हो रहे वन्य प्राणी

1.1 संसाधन से आशय, महत्व एवं प्रकार

मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति अथवा उनकी किसी कठिनाई का निवारण करने वाले या निवारण में योग देने वाले आश्रय या स्त्रोत को संसाधन कहते हैं। दूसरे शब्दों में, कोई वस्तु या तत्व तभी संसाधन कहलाता है जब उससे मनुष्य की किसी आवश्यकता की पूर्ति होती है, जैसे- जल एक संसाधन है क्योंकि इससे मनुष्यों व अन्य जीवों की प्यास बुझती है, खेतों में फसलों की सिंचाई होती है और यह स्वच्छता प्रदान करने, भोजन पकाने आदि कार्यों में हमारे लिए आवश्यक होता है। इसी प्रकार, वे सभी पदार्थ जो मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक हैं, संसाधन कहलाते हैं।

संसाधन मानव जीवन को सरल व सुखद बनाते हैं। आदिकाल में मनुष्य पूर्णत: प्रकृति पर निर्भर था। धीरे-धीरे मनुष्य ने अपनी बुद्धि-कौशल से प्रकृति के तत्वों का अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अधिकाधिक उपयोग किया। आज संसार के वे देश अधिक उन्नत व सम्पन्न माने जाते हैं जिनके पास अधिक संसाधन हैं। आज संसाधन की उपलब्धता हमारी प्रगति का सूचक बन गया है। इसीलिए संसाधनों का हमारे जीवन में बड़ा महत्व है।

हमें यह समझ लेना है कि प्रकृति का कोई तत्व तभी संसाधन कहलाएगा जब वह किसी मानवीय आवश्यकता की पूर्ति में सहायक हो। किसी वस्तु या पदार्थ को संसाधन बनाना मनुष्य के हाथ में है। मनुष्य अपनी बुद्धि, कौशल तकनीकी ज्ञान से प्राकृतिक तत्वों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उपयोगी एवं मूल्यवान बना लेता है। इस प्रक्रिया से प्राकृतिक तत्व संसाधन बन जाते हैं। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि "प्राकृतिक साधन संसाधन तब बनते हैं जब मनुष्य अपने बुद्धि, कौशल तथा तकनीकी ज्ञान से उन्हें अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए रूपान्तरण कर और अधिक उपयोगी एवं मूल्यवान बना लेता है।"

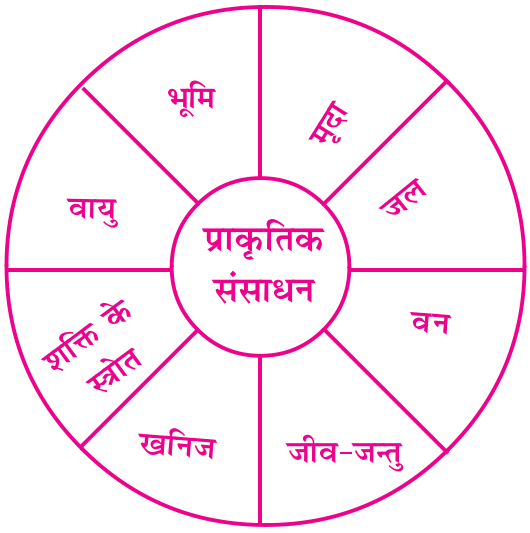

साधारणतया: संसाधन प्राकृतिक होते हैं। मेकनाल के अनुसार ''प्राकृतिक संसाधन वे हैं जो प्रकृति के द्वारा प्रदान किए जाते हैं तथा मानव के लिए उपयोगी हैं।'' प्राकृतिक साधनों को संसाधन बनाने का कार्य मानव द्वारा किया जाता है। मानव स्वयं भी एक संसाधन है। किसी भी देश के लिए शिक्षित, कुशल एवं स्वस्थ मनुष्य एक मूल्यवान संसाधन है।

संसाधनों का वर्गीकरण उनके स्वामित्व, पुन:पूर्ति, वितरण एवं प्रयोग के आधार पर निम्नानुसार किया जा सकता है –

स्वामित्व के आधार पर संसाधन –

- व्यक्तिगत संसाधन – किसी व्यक्ति की सम्पत्ति, स्वास्थ्य दक्षता आदि।
- राष्ट्रीय संसाधन – राष्ट्र की सम्पदा, सैन्य शक्ति, नागरिकों की देशभक्ति आदि।
- विश्व संसाधन – मानव मात्र की समृद्धि व कल्याण के लिए संसार की भौतिक और अभौतिक वस्तुएँ।

पुन: पूर्ति के आधार पर संसाधन –

- पुन:पूर्ति योग्य संसाधन – वे संसाधन जिनका उपयोग होने पर भी उनके गुणों को बनाये रखा जा सके, जैसे– खाद के उपयोग द्वारा कृषि भूमि को कृषि योग्य बनाये रखना है।
- पुन: आपूर्तिहीन संसाधन (एक बार उपयोगी संसाधन)– वे संसाधन जो एक बार उपयोग होने के बाद समाप्त हो जाते हैं, यथा पेट्रोल, कोयला आदि।
- बारम्बार प्रयोग वाले संसाधन – वे संसाधन जिनका उपयोग एक बार होने के बाद भी आवश्यक संशोधन के साथ पुन: उपयोग में लिया जाता है। जैसे धात्विक खनिज लोहा, तांबा आदि।
- सनातन प्राकृतिक संसाधन – ऐसे संसाधन जो उपयोग होने पर भी नष्ट नहीं होते। जैसे सौर ऊर्जा, जल इत्यादि।

वितरण के आधार पर संसाधन –

- सर्व सुलभ संसाधन – जो संसाधन सभी जगहों पर उपलब्ध हैं, जैसे– वायु।
- सामान्य सुलभ संसाधन– जो संसाधन अधिकतर स्थानों पर उपलब्ध हैं जैसे– मिट्टी, कृषि योग्य भूमि।
- विरल संसाधन– जो संसाधन सीमित स्थानों पर उपलब्ध हैं, यथा–कोयला, सोना, यूरेनियम आदि।
- एकल संसाधन– जो संसाधन संसार में एक या दो स्थानों पर उपलब्ध हैं, यथा क्रोमोलाइट धातु जो प्राकृतिक रूप से केवल ग्रीनलैण्ड में मिलती है।

प्रयोग के आधार पर वर्गीकरण –

- **अप्रयुक्त संसाधन** – संसाधनों का उपयोग जब तक नहीं किया जाता, तब तक उन्हें अप्रयुक्त संसाधन कहते हैं। जैसे कुछ खनिजों के भण्डारों का पता होने पर भी उनका दोहन और उनका कोई उपयोग भी नहीं हो पाता।
- **अप्रयोजनीय संसाधन** – वर्तमान में उपलब्ध तकनीक के बल पर जिन संसाधनों का उपयोग निकट भविष्य में नहीं हो सकता, अप्रयोजनीय संसाधन कहलाते हैं।

- **संभाव्य संसाधन** – जिन संसाधनों का ज्ञान होने पर भी तकनीक या योजना के अभाव में अभी उपयोग नहीं हो पा रहा है किन्तु भविष्य में उपयोग की संभावना है, संभाव्य संसाधन कहलाते हैं। जैसे नदियों का बहता हुआ जल नहर बन जाने के बाद सिंचाई के काम आ सकता है। बांध बन जाने के बाद विद्युत उत्पादन हो सकता है।
- **गुप्त संसाधन** – जब तक किसी पदार्थ के गुण और मानवीय हितों की पूर्ति हेतु आवश्यक प्रयोग ज्ञात न हों, तब तक वह पदार्थ गुप्त संसाधन कहलाता है, जैसे– जब तक पेट्रोलियम पदार्थ के गुण व प्रयोग मनुष्य को ज्ञात न थे, तब तक यह गुप्त संसाधन की श्रेणी में था।

इस अध्याय में हम मृदा, जल, वन एवं वन्यप्राणी का संसाधन के रूप में अध्ययन करेंगे।

1.2 मृदा : मृदा की बनावट, प्रकार, वितरण और उसका संरक्षण

मृदा किसान की अमूल्य सम्पदा है। हमारे देश के आर्थिक विकास का प्रमुख आधार मिट्टी या मृदा है। अमरीकी मिट्टी विशेषज्ञ डॉ बैनेट के अनुसार ''मृदा भूपृष्ठ पर मिलने वाले असंगठित पदार्थों की वह ऊपरी परत है जो मूल चट्टानों अथवा वनस्पति के योग से बनती है।'' धरातल के अधिकतर भाग पर मृदा पाई जाती है। यह मूल चट्टानों और जैव पदार्थों का सम्मिश्रण है, जिसमें उपयुक्त जलवायु होने पर नाना प्रकार की वनस्पतियाँ उगती है।

मानव जीवन में मृदा का महत्व बहुत अधिक है, विशेषकर किसानों के लिए। समस्त मानव जीवन मिट्टी पर निर्भर करता है। समस्त प्राणियों का भोजन प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मिट्टी से प्राप्त होता है। हमारे वस्त्रों के निर्माण में प्रयुक्त कपास रेशम, जूट व ऊन प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से हमें मिट्टी से ही मिलते हैं, जैसे– भेड़ मिट्टी पर उगी घास खाती है और हमें ऊन देती है। रेशम के कीड़े वनस्पति पर जीते हैं और वनस्पति मिट्टी पर उगती है। भारत में लाखों घर मिट्टी के बने हुए हैं। हमारा पशुपालन उद्योग, कृषि और वनोद्योग मिट्टी पर आधारित हैं। इस प्रकार मिट्टी हमारे जीवन का प्रमुख आधार है। विलकॉक्स के अनुसार ''मानव–सभ्यता का इतिहास मिट्टी का इतिहास है और प्रत्येक व्यक्ति की शिक्षा मिट्टी से ही प्रारम्भ होती है।''

मृदा का निर्माण

मृदा के निर्माण की प्रक्रिया बहुत धीमी है, मृदा की एक से.मी. परत के निर्माण में सैकड़ों वर्ष लग जाते हैं। इसकी 2½ से.मी. की पतली परत के निर्माण में 1000 वर्षों से अधिक का समय लग सकता है। मृदा–निर्माण के लिए समतल भूमि सबसे अच्छी होती है, क्योंकि इस पर मृदा के निर्माण में कम से कम बाधाएँ होती हैं।

मृदा के निर्माण में सहयोग देने वाले अनेक कारक हैं, जैसे– मूल चट्टान तथा भूभाग का उच्चावच, हजारों वर्षोंतक प्रभाव डालने वाली जलवायु की दशाएँ, जिनसे शैलों का अपक्षय होता है, पेड़–पौधे और जीव–जन्तुओं व इनके अवशेष।

मृदा परिच्छेदिका – पूर्ण विकसित मृदाओं के लम्बवत परिच्छेद (कटान) में गठन, रंग और परतें एक

के ऊपर एक बिछी होती हैं। मृदा की परतों के विन्यास को मृदा परिच्छेदिका कहते हैं– (क) ऊपरी परत को ऊपरी मृदा, (ख) दूसरी परत को उप मृदा, (ग) तीसरी परत को अपक्षयित मूल चट्टानी पदार्थ तथा (घ) चौथी परत में मूल चट्टानें होती हैं, जैसा कि चित्र में दर्शाया गया है।

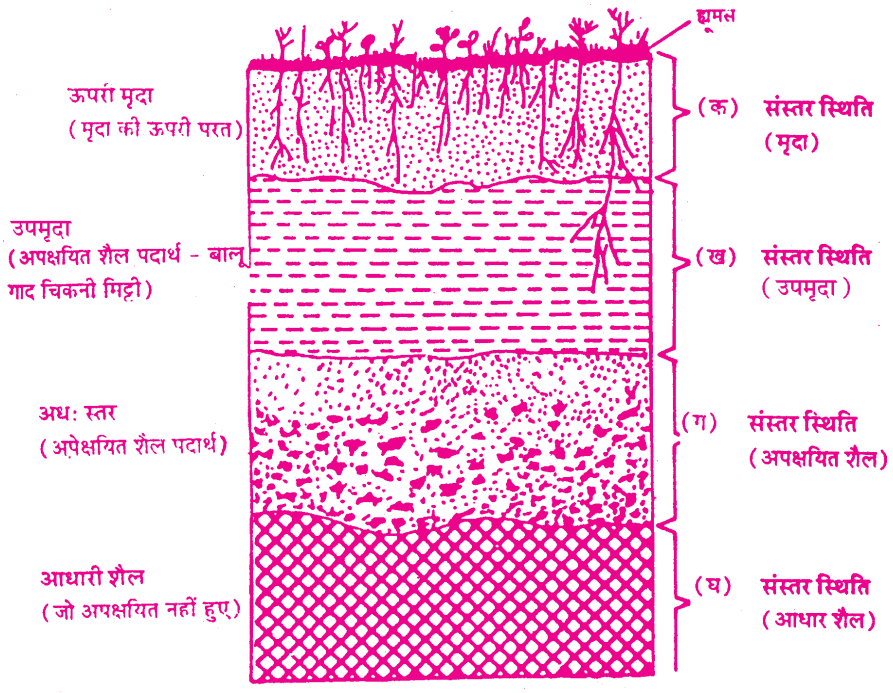

ऊपरी परत की ऊपरी मृदा ही वास्तविक मृदा की परत है। इसकी सबसे महत्वपूर्ण विशेषता इसमें ह्यूमस तथा जैव पदार्थ का पाया जाना है। सबसे ऊपर ह्यूमस तथा उसके नीचे जैव तत्वों की प्रधानता होती है। दूसरी परत में उपमृदा होती है, जिसमें चट्टानों के टुकड़े, बालू, गाद और चिकनी मिट्टी होती है, तीसरी परत में अपक्षयित मूल चट्टानी पदार्थ तथा चौथी परत में मूल चट्टानी पदार्थ होते हैं।

मृदा के प्रकार व वितरण

मृदा का वर्गीकरण अनेक विद्वानों ने किया है। भारत अपनी धरातलीय संरचना, वनस्पति एवं जलवायु की विविधता के लिए जाना जाता है। इस कारण भारत में मृदा को निम्नांकित रूप से वर्गीकृत किया जा सकता है–

जलोढ़ मिट्टी – इसे काँप, दोमट, कछारी या चीका मिट्टी कहा जाता है। यह मिट्टी हल्के भूरे रंग की होती है। खुदाई करने पर यह मिट्टी 490 मीटर की गहराई तक पाई गई है। इस मिट्टी में नेत्रजन, फास्फोरस और वनस्पति अंशों की कमी है, परन्तु पोटाश और चूना पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। भारत में यह मिट्टी हिमालय से निकलने वाली तीन बड़ी नदियों–सतलज, गंगा एवं ब्रह्मपुत्र और उनकी सहायक नदियों– द्वारा बहाकर लाई गई कांप मिट्टी से निर्मित हुई है। मिट्टी के इन बारीक कणों को जलोढ़क कहते हैं। इस मिट्टी में विभिन्न मात्रा में रेत, गाद तथा मृत्तिका (चीका मिट्टी) मिली होती है।

भारत के काफी बड़े क्षेत्र में पाई जाने के कारण यह मिट्टी बहुत महत्वपूर्ण है। इसके अन्तर्गत देश का 40 प्रतिशत भाग सम्मिलित है। यह मिट्टी हिमालय से निकलने वाली सतलज, गंगा तथा ब्रह्मपुत्र और उनकी सहायक नदियों की द्रोणी में स्थित पंजाब, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, उत्तराखण्ड, बिहार, पश्चिमी बंगाल, असम, मेघालय तथा उत्तरी पूर्वी राजस्थान में मिलती है। इसके अतिरिक्त दक्षिण भारत में गोदावरी, कृष्णा, कावेरी नदियों के डेल्टाई भागों, पूर्वी एवं पश्चिमी समुद्रतटीय मैदानों तथा नर्मदा और ताप्ती नदियों की घाटियों में भी सामान्य रूप से मिलती है।

काली या रेगड़ मिट्टी – इस मिट्टी को रेगड़ या कपास वाली काली मिट्टी भी कहते है। इसका रंग गहरा काला और कणों की बनावट बारीक व घनी होती है, इसमें अधिक देर तक जल एवं नमी ठहर सकती है। इस मिट्टी में चूना, पोटाश, मैग्नीशियम, एल्युमिनियम तथा लोहा पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है किन्तु फास्फोरस

नेत्रजन तथा जीवांश का अभाव होता है। इसमें रासायनिक तत्वों की मात्रा अधिक होती है। सूख जाने पर इसमें दरारें पड़ जाती हैं। इन दरारों से इसके वायु मिश्रण में सहायता मिलती है। इसे स्वत: जुताई वाली मिट्टी भी कहा जाता है।

भारत में यह मिट्टी गुजरात से अमरकंटक तक और बेलगाँव से गुना तक पाई जाती है। यह मिट्टी महाराष्ट्र के विदर्भ, खानदेश एवं मराठवाड़ा, मध्यप्रदेश में, उड़ीसा के दक्षिणी भाग, कर्नाटक के उत्तरी जिलों, आन्ध्रप्रदेश के दक्षिणी और तटवर्ती भाग, तामिलनाडु के भाग तथा राजस्थान के कुछ जिलों तथा उत्तरप्रदेश के बुन्देलखण्ड संभाग में मिलती है। यह मिट्टी कपास, दालें आदि के लिए अत्यधिक उपयुक्त है।

लाल मिट्टी - यह मिट्टी शुष्क और तर जलवायु में प्राचीन रवेदार और परिवर्तित चट्टानों के टूट-फूट से बनती है। ताप्ती नदी घाटी में पहाड़ियों के ढालों पर लगातार अधिक गर्मी पड़ने से चट्टानों के टूटनें पर उसमें मिला हुआ लोहा मिट्टी में फैल जाता है जिससे इसका रंग लाल हो गया है। कही-कही इसका रंग भूरा, चाकलेटी, पीला अथवा काला भी है। अनेक प्रकार की चट्टानों से बनी होने के कारण गहराई और उर्वरा शक्ति में भिन्नता पाई जाती है। यह मिट्टी अत्यन्त रन्ध्रयुक्त है। यह अत्यन्त बारीक तथा गहरी होने पर ही उपजाऊ होती है। इस मिट्टी में लोहा, एल्युमीनियम और चूना अधिक होता है। शुष्क ऊँचें मैदानों में पायी जाने वाली मिट्टी उपजाऊ नहीं होती, क्योंकि यहाँ की मिट्टी हल्के रंग की, पथरीली, कम गहरी तथा बालू के समान मोटे कण वाली होती है किन्तु निम्न भूमि क्षेत्र की मिट्टी अधिक गहरी, उपजाऊ और लाल रंग की होती है।

यह मिट्टी उत्तरप्रदेश के बुंदेलखण्ड से लेकर दक्षिण के प्रायद्वीप तक पायी जाती हैं। यह मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, पश्चिमी बंगाल, मेघालय, नागालैण्ड, उत्तरप्रदेश, राजस्थान, तमिलनाडु तथा महाराष्ट्र में मिलती है। इस मिट्टी में बाजरा की फसल अच्छी पैदा होती है, किन्तु गहरे लाल रंग की मिट्टी कपास, गेहूँ, दालें और मोटे अनाज के लिए उपयुक्त है।

लैटेराइट मिट्टी - इस मिट्टी का निर्माण ऐसे भागों में हुआ है जहाँ शुष्क व तर मौसम बारी-बारी से होता है। यह मिट्टी लैटेराइट चट्टानों की टूट फूट से बनती है। यह मिट्टी चौरस उच्च भूमियों पर मिलती है। इस में चूना, फास्फोरस और पोटाश कम मिलता है, किन्तु वनस्पति का अंश पर्याप्त होता है। गहरी लेटराइट मिट्टी में लोहा ऑक्साइड और पोटाश की मात्रा अधिक होती है। लेटराइट मिट्टी तीन प्रकार की होती है -

1. गहरी लाल लैटेराइट मिट्टी, 2. सफेद लैटेराइट मिट्टी, 3. गहरी जल वाली लैटेराइट मिट्टी

यह तमिलनाडु के पहाड़ी भागों और निचले क्षेत्रों, कर्नाटक के कुर्ग जिले, केरल राज्य के चौड़े समुद्री तट, महाराष्ट्र के रत्नागिरि जिले, पश्चिम बंगाल के बेसाल्ट और ग्रेनाइट पहाड़ियों के बीच तथा उड़ीसा के पठार के ऊपरी भागों और घाटियों में मिलती है। यह मिट्टी चावल, कपास, गेहूँ, दाल, मोटे अनाज, सिनकोना, चाय, कहवा आदि फसलों के लिए उपयोगी है।

मरुस्थलीय मिट्टी - यह बालू प्रधान मिट्टी है जिसमें बालू के कण मोटे होते हैं। यह मिट्टी दक्षिण-पश्चिम मानसून द्वारा कच्छ के रन की ओर से उड़कर भारत के पश्चिमी शुष्क प्रदेश में जमा हुई है। इसमें खनिज नमक अधिक मात्रा में पाया जाता है। मरुस्थलीय मिट्टी में नमी कम रहती है तथा वनस्पति के अंश भी कम ही पाये जाते हैं, किन्तु सिंचाई करने पर यह उपजाऊ हो जाती है। इस मिट्टी में गेहूँ, गन्ना, कपास, ज्वार, बाजरा, सब्जियाँ आदि पैदा की जाती है। सिंचाई की सुविधा उपलब्ध न होने पर यह बंजर पड़ी रहती है।

इस प्रकार की मिट्टी शुष्क प्रदेशों में विशेषकर पश्चिमी राजस्थान, गुजरात, दक्षिणी पंजाब, दक्षिणी हरियाणा और पश्चिमी उत्तरप्रदेश में मिलती है।

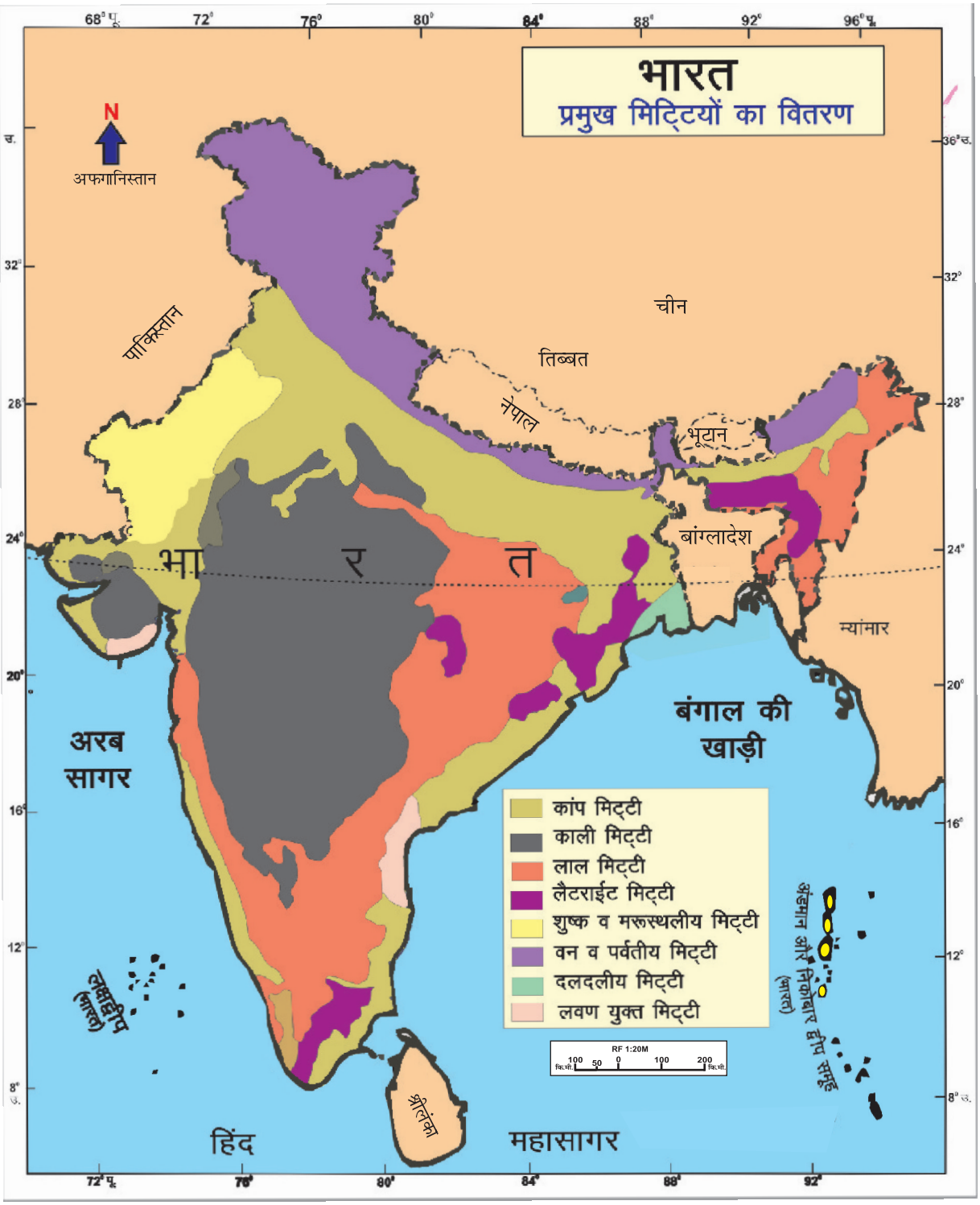

पर्वतीय मिट्टी – यह मिट्टी हिमालयी पर्वत श्रेणियों पर पायी जाती है। अधिकांशत: यह मिट्टी पतली, दलदली और छिद्रमयी होती है। नदियों की घाटियों और पहाड़ी ढ़ालों पर यह अधिक गहरी होती है। हिमालय के दक्षिणी ढ़ालों के अधिक खड़ा होने के कारण यहाँ इसका जमाव अधिक नहीं होता। पहाड़ी ढ़ालों के तलहटी में टरशियरीकालीन मिट्टी पाई जाती है जो हल्की बलुई, छिछली, छिद्रमय और कम वनस्पति अंश वाली है। पश्चिमी

हिमालय के ढ़ालों पर बलुई मिट्टी मिलती है, मध्य हिमालय के क्षेत्र में अधिक वनस्पति अंशों वाली उपजाऊ मिट्टी मिलती है। अच्छी वर्षा होने पर इस मिट्टी में, दून एवं कांगड़ा घाटी में, चाय की अच्छी पैदावार होती है।

हिमालय के दक्षिणी भाग में, असम और दार्जिलिंग में, चिकनी एवं महीन मिट्टी मिलती है, जिसमें पत्थरों के छोटे टुकड़े अधिक तथा वनस्पति, चूना और लोहे के अंश कम पाये जाते हैं, चाय एवं आलू की कृषि के लिए उपयुक्त है। नैनीताल, मसूरी, चकराता आदि स्थानों के निकट चूने एवं डोलोमाइट चट्टानों से मिट्टी प्राप्त होती है जिसमें चीड़ एवं साल के वृक्ष होते हैं। हिमालय के उन भागों में जहाँ ज्वालामुखीय उद्‌गार हुए हैं उसमें ग्रेनाइट, डोलामाइट आदि आग्नेय चट्टानें पायी जाती हैं।

मृदा अपरदन - मृदा को सबसे बड़ा नुकसान अपरदन से होता है। वनस्पतिविहीन नरम मृदा पर अपरदन की प्रक्रिया तीव्र होती है। अपरदन की तीव्र गति के कारण भारत में मिट्टियों की उर्वरा शक्ति प्रतिवर्ष कम होती जा रही है। भूमि के अपरदन की यह समस्या देश के लिए चिन्ताजनक है। मृदा अपरदन का यह परिणाम भूमि तक ही सीमित नहीं है। इसका फल मनुष्यों को भी भुगतना पड़ता है, क्योंकि इससे भूमि की पैदावार निरंतर क्षीण होती जाती है।

मृदा अपरदन के कारण

- मानव द्वारा वनों का विनाश
- अत्यधिक पशु चारण
- आदिवासियों द्वारा झूमिंग कृषि करना
- पवन अपरदन
- अवैज्ञानिक तरीके से कृषि

मृदाक्षरण से हानियाँ

राष्ट्रीय योजना समिति ने भूक्षरण के संयुक्त प्रभावों को निम्न रूप में स्पष्ट किया है -

1. वनस्पति के नष्ट हो जाने के कारण सूखे की लम्बी अवधि होना।
2. जल के अतिरिक्त स्त्रोतों पर प्रतिकूल प्रभाव तथा सिंचाई में कठिनाई होना।
3. नदियों की तह में बालू का जमना जिससे धरापरिवर्तन और बंदरगाहों का मार्ग अवरुद्ध होना।
4. उच्चकोटि की भूमि का नष्ट होना एवं कृषि उत्पादन पर दुष्प्रभाव पड़ना।
5. कृषि योग्य भूमि में कमी आना।

मृदा संरक्षण

बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण प्राकृतिक संसाधनों का बड़े पैमाने पर विनाश हुआ है। जिसमें अनेक प्राकृतिक संसाधनों के नष्ट होने का खतरा पैदा हो गया हैं। इसलिए मृदा संरक्षण द्वारा विनाश रोकना आवश्यक है। मृदा संरक्षण के लिए निम्नलिखित उपाय किये जा सकते हैं -

- पहाड़ी एवं पर्वतीय क्षेत्रों में सीढ़ीदार खेतों में फसल उगाना।
- खेतों में बँधिकाएं बनाकर नालीदार अपरदन को रोकना।
- शुष्क प्रदेशों में पवन की गति को रक्षकमेखला (पेड़ पौधों की बाड़) द्वारा कम करके मृदा अपरदन को रोकना। पहाड़ी ढालों पर तथा बंजर भूमि में वृक्षारोपण करना तथा पशुओं की चराई पर नियन्त्रण रखना।
- पर्वतीय ढालों एवं ऊँचे-नीचे क्षेत्रों में बहते हुए जल का संग्रह करना।
- ग्रामीण क्षेत्रों में चारागाहों का विकास करना।

1.3 जल : जल के स्त्रोत व उसके प्रकार, वितरण और जल संरक्षण

जल एक मूल्यवान सम्पदा है। इससे हमारी मूलभूत आवश्यकताएँ पूर्ण होती हैं। पृथ्वी पर जीवन का आधार जल ही है। वनस्पति एवं जीव-जन्तुओं के शरीर में जल का अंश प्रधान होता है। मनुष्य के शरीर में 70 प्रतिशत जल होता है।

जल के चार प्रमुख स्त्रोत हैं - 1. पृष्ठीय जल, 2. भौम जल, 3. वायुमंडलीय जल तथा 4. महासागरीय जल। भूपृष्ठ या भूतल पर जल वर्षा व बर्फ के पिघलने से प्राप्त होता है। वर्षा का कुछ जल बहकर तालाबों व झीलों में एकत्र हो जाता है। अधिकांश जल बहकर नदियों में चला जाता है जो बाद में सागर व महासागर में पहुँचता है। वर्षा जल का कुछ अंश धरातल द्वारा सोख लिया जाता है जिसे हम भूमिगत जल या भौम जल कहते हैं। इसके अतिरिक्त वर्षा जल का कुछ अंश भाप बनकर वायुमण्डल में लौट जाता है जिसे वायुमण्डलीय जल कहते हैं।

पृष्ठीय जल - नदियों, झीलों व छोटे-बड़े जलाशयों का जल पृष्ठीय जल कहलाता है। पृष्ठीय जल के प्रमुख स्त्रोत नदियाँ, झीलें, तालाब आदि हैं। भारत में नदियाँ व सहायक नदियाँ देश के हर भाग में पाई जाती हैं।

भारत के कुल पृष्ठीय जल का लगभग 60 प्रतिशत भाग तीन प्रमुख नदियों सिंधु, गंगा और ब्रह्मपुत्र में से होकर बहता है। संसार की बड़ी नदियों में ब्रह्मपुत्र और गंगा का क्रमशः आठवाँ तथा दसवाँ स्थान है।

भारत की प्रमुख नदियाँ

नदी	लम्बाई (किमी. में)	नदी	लम्बाई (किमी. में)
सिन्धु	1134	गंगा	2725
गोदावरी	1465	कृष्णा	1400
नर्मदा	1382	यमुना	1376
चिनाव	1180	घाघरा	1080
पेन्नार	597		

भौम जल - वर्षा जल का कुछ भाग भूमि द्वारा सोख लिया जाता है। कृषि व वनस्पति उत्पादन में इसका योगदान महत्वपूर्ण होता है। सोखा हुआ जल धरातल के नीचे अभेद्य चट्टानों तक पहुँचकर एकत्र हो जाता है। इसे कुओं व ट्यूबवेलों के द्वारा धरातल पर लाया जाता है तथा मानवीय उपयोग के अतिरिक्त कृषि भूमि की सिंचाई, बागवानी, उद्योग आदि के लिये उपयोग किया जाता है।

देश में भौम जल का वितरण बहुत असमान है। चट्टानों की संरचना, धरातलीय दशा तथा जलापूर्ति का स्वरूप भौम जल के वितरण को प्रभावित करता है। समतल मैदानी भागों में भौम जल की मात्रा अधिक है। महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक आदि दक्षिणी राज्यों में अभेद्य चट्टानों के कारण बहुत कम मात्रा में वर्षा का जल भूमि सोख पाती है। इसीलिए दक्षिण भारत में भौम जल की कमी पाई जाती है।

वायुमंडलीय जल - वाष्प रूप में होता है। अतः इसका उपयोग नहीं हो पाता।

महासागरीय जल - देश के पश्चिम, पूर्व व दक्षिण में क्रमशः अरब सागर, बंगाल की खाड़ी और हिन्द महासागर है। इस जल का उपयोग मुख्यतः जलपरिवहन और मत्स्योद्योग में होता है।

जल के उपयोग - जल का उपयोग मुख्यतः पीने, भोजन बनाने, सफाई हेतु तथा सिंचाई, जलविद्युत उत्पादन, उद्योग, परिवहन, मनोरंजन आदि के लिए होता है। जल का सर्वाधिक उपयोग सिंचाई के लिए किया जाता है। देश में सिंचाई की प्रथा प्राचीनकाल से चली आ रही है। सिंचाई के तीन प्रमुख साधन हैं- 1. नहरें, 2. कुँए और नलकूप तथा 3. तालाब।

जलसंसाधन की समस्याएँ व संरक्षण

जल संसाधन सम्बन्धी अनेक प्रकार की समस्याएँ हैं जिनका सम्बन्ध संसाधन की उपलब्धता, उपयोग, गुणवत्ता तथा प्रबन्धन से है। स्वतंत्रता के समय सिंचाई व उद्योगों के लिए जल पर्याप्त रूप से उपलब्ध था परन्तु अब जनसंख्या वृद्धि के कारण हर क्षेत्र में जल में कमी हो रही है। गर्मियों में जल संसाधन का अभाव प्राय: सम्पूर्ण दक्षिण भारत में होता है, जबकि वर्षा ऋतु में जल की कमी नहीं पाई जाती। जिन प्रदेशों में नलकूपों से सिंचाई होती है वहाँ विद्युत प्रदाय की स्थिति पर जल संसाधन की उपलब्धता निर्भर है। इन कारणों से जल संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग, संरक्षण और प्रबन्धन आवश्यक हो गया है।

जल संसाधनों की सीमित आपूर्ति, तेजी से बढ़ती हुई माँग और इनकी असमान उपलब्धता के कारण इनका संरक्षण आवश्यक है। इसके लिए निम्नलिखित तीन कदम आवश्यक है –

- वर्षा जल संग्रहण तथा इसके अपवाह को रोकना।
- छोटे-बड़े सभी नदी जल संग्रहण क्षेत्रों का वैज्ञानिक प्रबन्ध करना।
- जल को प्रदूषण से बचाना।

1.4 वन एवं वन्य प्राणी : उपयोगिता व संरक्षण

भूतल का वह विस्तृत क्षेत्र जिसमें प्राकृतिक वनस्पति के रूप में वृक्षों की प्रधानता है वन कहलाते हैं। वन प्रकृति की अमूल्य देन है। यह महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन हैं। ऐसा अनुमान है कि प्रारम्भ में पृथ्वी का एक चौथाई भाग (25 प्रतिशत) वनों से ढ़ँका हुआ था, किन्तु मानव विकास के साथ खेती, आवास तथा कल-कारखानों के लिए भूमि प्राप्त करने हेतु वनों की बड़े पैमाने पर कटाई कर दी गई। फलस्वरूप अब पृथ्वी के केवल 15 प्रतिशत भाग पर ही वन पाए जाते हैं।

प्राकृतिक वनस्पति किसी स्थान की स्थिति, जलवायु तथा वहाँ पायी जाने वाली मिट्टी पर निर्भर करती है। स्थिति, जलवायु तथा मिट्टी की परिस्थितियाँ एक समान न पाये जाने के कारण प्राकृतिक वनस्पति के वितरण में काफी विभिन्नता है। भारत में जलवायु की विविधता एवं धरातलीय असमानताओं के कारण विभिन्न प्रकार के वन पाये जाते हैं। वनों की इतनी विविधता विश्व के किसी अन्य देश में नहीं मिलती है। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के अनुसार हमारे देश में पेड़-पौधों की लगभग 47,000 प्रजातियाँ हैं। 5000 प्रजातियाँ तो ऐसी है जो केवल भारत में ही मिलती हैं। वितरण के आधार पर भारतीय वनों के निम्नलिखित प्रकार हैं –

1. उष्ण कटिबंधीय सदाबहार वन
2. मानसूनी वन – (अ) आर्द्रमानसूनी वन, (ब) शुष्क मानसूनी वन
3. मरुस्थलीय वन
4. डेल्टाई वन
5. हिमालय पर्वतीय वन

आप पिछली कक्षा में इन वनों एवं वन्य जीवों का विवरण पढ़ चुके हैं।

भारतीय अर्थव्यवस्था में वनों का महत्व

वन एक सम्पत्ति है। भारत में वन सम्पदा देश के भौगोलिक क्षेत्रफल का 20.64 प्रतिशत है। यह विश्व के वन क्षेत्र का 1.7 प्रतिशत है। देश में प्रति व्यक्ति वन क्षेत्र 0.11 हेक्टेयर है। यहाँ विभिन्न प्रकार के वन पाये जाते हैं जिनका वितरण एक समान नहीं है। इन वनों में कठोर लकड़ी के वृक्ष अधिक पाये जाते हैं।

डा. पी. एच चटरवक के शब्दों में – ''वन राष्ट्रीय सम्पत्ति हैं और सभ्यता के लिए इनकी नितान्त आवश्यकता हैं। ये केवल लकड़ी ही प्रदान नही करते, बल्कि कई प्रकार के कच्चे माल, पशुओं के लिए चारा तथा राज्य के लिए आय भी पैदा करते हैं। इसके परोक्ष लाभ तो और भी अधिक महत्वपूर्ण है।''

प्रकृति प्रेमी वेकन ने कहा है कि –''वनों से हम आक्सीजन, पानी, भोजन, जलवायु, भूक्षरण को रोकने की क्षमता और लकड़ी प्राप्त करते हैं। वृक्ष लगाना न केवल आर्थिक दृष्टि से उपयोगी है, वरन् पर्यावरण की शुद्धि के लिए भी आवश्यक है।''

भारतीय अर्थव्यवस्था के संदर्भ में वनों के महत्व को दो भागों में बाँट सकते हैं – 1. प्रत्यक्ष, 2. अप्रत्यक्ष।

वनों से प्रत्यक्ष लाभ

- **लकड़ी की प्राप्ति** – वनों से प्राप्त लकड़ी एक महत्वपूर्ण ईंधन है। वृक्षों से सागौन, साल, शीशम, चीड़, देवदार, आबनूस, चंदन आदि लकड़ी मिलती है। लकड़ी से फर्नीचर बनाया जाता है,

- **सहायक उपजों की प्राप्ति** – वनों से सहायक उपजों के रुप में लाख, चमड़ा, गोंद, शहद, कत्था, मोम, छालें, बाँस व बैंत, जड़ी–बूँटियाँ व जानवरों के सींग आदि मिलते हैं ये लाभकारी उद्योगों के आधारभूत तत्व हैं।

- **आधारभूत उद्योगों के लिए सामग्री** – वनों से प्राप्त लकड़ी, घास, सनोवर तथा बाँस से कागज उद्योग, चीड़, स्प्रूस तथा सफेद सनोवर से दियासलाई उद्योग, लाख से लाख उद्योग, मोम से मोम उद्योग, महुआ की छालें व बबूल से गोंद, चमड़ा उद्योग, चन्दन, तारपीन और केवड़ा से तेल उद्योग, जड़ी–बूँटियों से औषधि उद्योग विकसित हुए हैं।

- **जानवरों के लिए चारागाह** – वन क्षेत्र उत्तम चारागाह स्थल हैं। वनों से जानवरों के लिए घास व पत्तियाँ मिलती हैं।

- **रोजगार प्राप्ति** – वनों पर 7.8 करोड़ व्यक्तियों की आजीविका आश्रित है। वनों से जो कच्चे पदार्थ मिलते हैं उनसे बहुत से उद्योग चल रहे हैं और करोड़ों व्यक्तियों को रोजगार मिला हुआ है।

- **विदेशी मुद्रा की प्राप्ति** – वनों से प्राप्त लाख, तारपीन का तेल, चन्दन का तेल, लकड़ी से बनी कलात्मक वस्तुओं को निर्यात करने से विदेशी मुद्रा मिलती है।

- **लघु उद्योगों में सहायक** – वनों से प्राप्त वस्तुओं जैसे तेंदूपत्ता, बेंत, शहद, मोम आदि से लघु उद्योगों का विकास हुआ है।

- **सरकार को राजस्व** – सरकार को वनों से राजस्व व रायल्टी के रूप में करोड़ों रुपये की प्राप्ति होती है। वर्तमान में यह राजस्व 670 करोड़ रुपये वार्षिक है।

वनों से अप्रत्यक्ष लाभ

जे. एस. कालिन्स ने कहा है कि ''वृक्ष पर्वतों को थामे रहते हैं। वे तूफानी वर्षा के प्रभाव को कम करते हैं। नदियों को अनुशासन में रखते हैं, झरनों को बनाये रखते हैं और पक्षियों का पोषण करते हैं।'' वनों के अप्रत्यक्ष लाभ निम्नलिखित हैं –

- **मिट्टी के कटाव में कमी** – वनों के कारण मिट्टी की ऊपरी सतह नहीं बह पाती है। इससे मिट्टी के पोषक तत्वों में कमी नहीं होती एवं मिट्टी उपजाऊ बनी रहती है।

- **जलवायु को सम बनाये रखना** – वन हवाओं के प्रभाव को कम करते है। ठण्डी और गर्म

हवाएँ वन क्षेत्र की जलवायु को समशीतोष्ण बनाये रखती हैं।

- **बाढ़ नियन्त्रण में सहायक** - वन पानी के वेग को कम कर देते हैं, बाढ़ के पानी को सोख लेते हैं। बाढ़ का पानी वन क्षेत्रों में फैलकर धीरे-धीरे नदियों में जाता है। इससे बाढ़ नियन्त्रण होता है।

- **रेगिस्तान के प्रसार पर रोक** - सरदार पटेल ने कहा था कि ''यदि रेगिस्तान के बढ़ते हुए प्रसार को रोकना है और मानव सभ्यता की रक्षा करनी है तो वन सम्पदा के क्षय को अवश्य रोकना होगा।'' वृक्षारोपण से रेगिस्तान का प्रसार रुकता है।

- **वर्षा में सहायक** - वनों को वर्षा का संचालक कहा जाता है। वन बादलों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं जिससे वर्षा होती है।

- **जलस्तर में वृद्धि** - वन देश के कुँओं, तालाबों, नदियों, झरनों आदि में पानी का स्तर बढ़ा देते हैं, जिससे इसमें पानी बना रहता है।

- **भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि** - पेड़ पौधों की पत्तियाँ वन क्षेत्रों में गिरती हैं और सड़गल कर भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि करती है।

- **ऑक्सीजन की मात्रा पर प्रभाव** - वन ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ाने में सहायक होते हैं। यदि वृक्षों के कटाव की वर्तमान स्थिति बनी रही तो वातावरण में ऑक्सीजन की कमी हो जायेगी। ऑक्सीजन के अभाव में मानव समुदाय संकट में पड़ जाएगा। इसलिए वृक्षारोपण को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

- **प्राकृतिक सौन्दर्य** - वनों से देश के प्राकृतिक सौन्दर्य में वृद्धि होती है वन देशी व विदेशी सैलानियों को आकर्षित करते हैं।

भारत में वनों का संरक्षण

भारत में ब्रिटिश सरकार ने 1894 में वन नीति अपनायी थी, जिसके अनुसार वनों की देखरेख एवं विकास हेतु हर राज्य में वन विभाग की स्थापना की गई। इस नीति के दो मुख्य उद्देश्य थे - राजस्व प्राप्ति और वनों का संरक्षण।

1. स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सरकार ने 1950 में एक केन्द्रीय वन बोर्ड की स्थापना की। वनों के सम्बन्ध में नवीन नीति बनाई गई है। इसकी चार मुख्य बातें थीं- 1. वनों के क्षेत्रफल को बढ़ाकर 33·3 प्रतिशत करना, 2. नये वनों को लगाना, 3. वनों को सुरक्षित करना और 4. वनों के सम्बन्ध में अनुसंधान करना।

2. 7 दिसम्बर 1988 को नवीन वन नीति घोषित की गई जिसके तीन लक्ष्य थे - 1. पर्यावरण में स्थिरता लाना, 2. जीव-जन्तुओं व वनस्पति जैसी प्राकृतिक धरोहर का संरक्षण करना, 3. लोगों की बुनियादी जरुरतें पूरी करना। इस वन नीति की मुख्य बातें निम्न थीं-

- पहाड़ी, घाटियों व नदियों के जलग्रहण क्षेत्रों में वन बढ़ाए जाएँ।
- जंगलों पर आदिवासियों और गरीबों के पारम्परिक हक बरकरार रखे जाए।
- वनों की उत्पादकता बढ़ाने पर ध्यान दिया जाए।
- वर्तमान वनों को कटाई से बचाया जाए और पर्यावरण संतुलन बनाये रखा जाए।

वन संसाधन की मुख्य समस्याएँ

- वनों का क्षेत्रफल कम होना
- वनों का ऊँचे पहाड़ों पर होना
- वनों का असमान वितरण
- परिवहन सम्बन्धी कठिनाईयाँ
- परम्परागत तकनीक
- शहरीकरण से वनों की समाप्ति
- वनों की आग

- उद्योगों को रियायती दर पर वन उत्पाद प्राप्त करने पर रोक लगायी जाए।
- ग्रामीण और कुटीर उद्योगों को छोड़कर वन पर आधारित उद्योगों को इजाजत न दी जाए।
- ग्रामीण व आदिवासी इलाकों के लोगों को ईंधन, चारा, छोटी इमारती लकड़ी की पूर्ति पर ध्यान दिया जाए।

3. वर्ष 1988 की घोषित राष्ट्रीय वन नीति को क्रियाशील बनाने के लिए 1999 में एक 20 वर्षीय राष्ट्रीय वानिकी कार्य योजना लागू की गई। वन विकास के लिए निम्न कार्य भी किये जा रहे हैं–

- **केन्द्रीय वन आयोग की स्थापना** – केन्द्र सरकार ने 1965 में केन्द्रीय वन आयोग की स्थापना की। इसका कार्य आंकड़े व सूचनाएँ एकत्रित करना, तकनीकी सूचनाओं को प्रसारित करना, बाजारों का अध्ययन करना और वन विकास में लगी संस्थाओं के कार्यों को समन्वित करना है।

- **भारतीय वन सर्वेक्षण संगठन** – वनों में क्या–क्या वस्तुएँ उपलब्ध हैं उनका पता लगाने हेतु 1971 में इस संगठन की स्थापना की गई।

- **वन अनुसंधान संस्थान की स्थापना** – देहरादून में वनों से प्राप्त वस्तुओं तथा वनों के सम्बन्ध में अनुसंधान एवं शिक्षा देने के लिए इस संस्था को स्थापित किया गया। इसके चार क्षेत्रीय केन्द्र बैंगलूर, कोयम्बटूर, जबलपुर और बुर्नीहट, है।

- **काष्ट कला प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना** – राज्य सरकार के वन अधिकारियों एवं कर्मचारियों को लकड़ी काटने का प्रशिक्षण देने के लिए 1965 में देहरादून में काष्ट कला प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किया गया।

- **राज्य वन विकास निगमों की स्थापना** – राज्यों में वनों की कटाई को ठेके पर देने की प्रथा थी। ठेकेदारी प्रथा को समाप्त कर वनों की कटाई हेतु वाणिज्यिक वन विकास की स्थापना 19 राज्यों में की गई है।

- **भारतीय वन प्रबन्ध संस्थान की स्थापना** – वन संसाधन व प्रबन्धन व्यवसाय की नवीन बातों की जानकारी देने हेतु 1978 में स्वीडिश कम्पनी की सहायता से भारत के अहमदाबाद में इस संस्थान की स्थापना की गई है। केन्द्र सरकार ने मध्यप्रदेश के भोपाल में भारतीय वन प्रबन्ध संस्थान की स्थापना की है। यहाँ पर अनुसंधान व केस स्टेडी के आधार पर वन प्रबन्ध में स्नातकोत्तर व डॉक्टरेट की उपाधि प्रदान की जाती है।

- **वन संरक्षण अधिनियम** – 1980 में भारत सरकार ने वन संरक्षण अधिनियम पारित करके किसी भी वनभूमि को सरकार की अनुमति के बिना कृषि भूमि में परिवर्तित नहीं करने का प्रावधान निश्चित किया है। सरकार ने वनों को चार वर्गो में बाँटा है। 1. सुरक्षित वन, 2. राष्ट्रीय वन, 3. ग्राम्य वन, 4. वृक्ष समूह। प्रबन्धन की दृष्टि से वनों के तीन वर्ग हैं– आरक्षित वन 52 प्रतिशत, सुरक्षित वन 32 प्रतिशत, अवर्गीकृत वन 16 प्रतिशत।

- **वनमहोत्सव** – वनों के क्षेत्रफल को बढ़ाने व जनता में वृक्षारोपण की प्रवृत्ति पैदा करने के लिए भारत के तत्कालीन कृषि मंत्री श्री के. एम. मुन्शी ने 1950 में वन महोत्सव ''अधिक वृक्ष लगाओ आंदोलन'' प्रारंभ किया। प्रतिवर्ष देश में 1 से 7 जुलाई तक वन महोत्सव कार्यक्रम मनाया जाता है।

- **सामाजिक वानिकी** – विश्व बैंक से प्राप्त वित्तीय सहायता से वृक्षारोपण की यह योजना शुरु की गई है। इसमें चक वानिकी, विस्तार वानिकी एवं शहरी वानिकी के अन्तर्गत खेतों, सड़कों, रेल लाईन के किनारे वृक्षारोपण किया जाता है।

'हर बच्चे के लिए एक पेड़' स्कूलों व कालेजों में यह नारा विकसित किया गया है। वन महोत्सव का प्रचार–प्रसार

कर फार्म वृक्षारोपण, सड़कों, नहरों एवं रेल लाईनों के किनारे वृक्षारोपण कर जनभागीदारी को बढ़ावा दिया जाना आवश्यक है। वन कानूनों को प्रभावी ढंग से लागू करके हरे भरे वृक्षों को काटने पर रोक लगाई गई है। हिमालय क्षेत्र में वृक्षों की कटाई को रोकने एवं पशुओं की मुक्त चराई पर उचित रोकथाम की व्यवस्था की गई है।

- **संयुक्त वन प्रबंधन** - देश के 21 राज्यों में संयुक्त वन प्रबन्धन व्यवस्था को अपनाया गया है। इसके अंतर्गत 70 लाख हेक्टेयर क्षेत्र के नष्ट हुए वनों के विकास हेतु 35000 ग्रामीण वन सुरक्षा समितियों की स्थापना की गई है।

- **वन अग्नि नियंत्रण परियोजना** - देश में वनों में आग लगने के कारणों का पता लगाने तथा रोकथाम के लिए चन्द्रपुर (महाराष्ट्र) एवं हल्द्वानी नैनीताल (उत्तराखंड) में यू.एन.डी.पी. के सहयोग से एक आधुनिक वन अग्नि नियन्त्रक परियोजना शुरु की गई है जो देश के 10 राज्यों में चलाई जा रही है।

1.5 वन्य प्राणी एवं विलुप्त हो रहे वन्य प्राणी

वनों के साथ-साथ वन्य जीव भी मानव के लिए महत्वपूर्ण संसाधन हैं। वन्य जीवों से मांस, खाल, हाथीदाँत आदि प्राप्त होते हैं। वन के साथ-साथ मानव ने वन्य प्राणियों का भी बेदर्दी से विनाश किया है। इससे वन्य जीवों का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। बाघ, सिंह, हाथी, गेंड़े आदि की संख्या में निरन्तर कमी आ रही है। आने वाले कुछ ही वर्षों में वन्य प्राणियों की कुछ प्रजातियाँ पूर्णतः लुप्त हो जाने का भय है। इन्हें पर्यावरण संतुलन के लिए बचाना आवश्यक है।

वन्य प्राणी विनाश हेतु उत्तरदायी कारण

- बड़े पैमाने पर वनों का विनाश।
- विविध उद्देश्यों से वन्य प्राणियों का शिकार।
- पर्यावरणीय प्रदूषण।
- जीवों के प्रति घटती दया भावना।
- कुछ उद्योगों के लिए कच्चा माल।
- मानव समुदाय की उपेक्षापूर्ण सोच।

वन्यप्राणी संरक्षण के उपाय - वन्य प्राणियों को विनाश से बचाने हेतु निम्नलिखित प्रयास किये जा सकते हैं -

- वन्य जीवों के प्राकृतिक आवासों को बिना नुकसान पहुँचाए प्रबंधन इत्यादि कार्य करना।
- वन्य जीवों के शिकार पर पूर्णतः प्रतिबन्ध लगाना।
- वन्य क्षेत्रों में जैव मण्डल रिजर्व की स्थापना।
- लुप्त हो रहे जीवों का पुनर्विस्थापन के लिए राष्ट्रीय पार्क, अभ्यारण्यों की स्थापना करना।
- वन्य जीवों के प्रति लोगों के रवैये में परिवर्तन हेतु शिक्षा एवं जागरूकता विकास करना।
- वन्य जीव प्रबन्धन की योजनाओं को ईमानदारी से लागू करना।

विलुप्त हो रहे वन्य प्राणी-

राष्ट्रीय उद्यानों/अभ्यारण्यो में पाई जाने वाली दुर्लभ प्रजातियां

राष्ट्रीय उद्यान/अभयारण्य	राज्य/क्षेत्र	पाई जाने वाली दुर्लभ प्रजातियां
1. मानस वन्य जीव अभयारण्य	असम-बरपेटा	हाथी, गेंडा, जंगली भैंसा, गौर, बौना, सूअर, गोल्डन लंगूर, सिविट बिल्ली, बाघ, तेंदुआ, रीछ, घड़ियाल, अजगर, बड़ी गिलहरी।

2.	काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान	असम–जोरहट	एक सींग वाले भारतीय गेंडों का आश्रय स्थल
3.	धृगन्धरा अभयारण्य	गुजरात	जंगली गधों की लुप्तप्राय प्रजाति 'घुड़खर'
4.	केबुल–लामजाओ राष्ट्रीय उद्यान	मणिपुर	भौंह जैसी सींगों वाला हिरण, जल पक्षी
5.	गिर राष्ट्रीय उद्यान	गुजरात	एशियाई सिंह
6.	मरु अभयारण्य	राजस्थान (जैसलमेर, बाड़मेर)	गोडावन, काला मृग, चिंकारा
7.	कंचनजंगा नेशनल पार्क	सिक्किम	लाल पाण्डा, हिम तेंदुआ, बादली तेंदुआ, थार कस्तूरी मृग, भरल, थालिन, धूरल, सीरो, जंगली गधे, आदि।
8.	वेदानथंगल जल पक्षी अभयारण्य	तमिलनाडु	विविध जल पक्षी
9.	सिमलीपाल राष्ट्रीय उद्यान	उड़ीसा–मयूरभंज	बाघ, गौर, चीतल, तेंदुआ, मूषक हिरण, उड़ने वाली गिलहरी, मगरमच्छ
10.	भीतरकनिका वन्यजीव अभ्यारण्य	उड़ीसा–बालेश्वर	खारे पानी का मगरमच्छ, मॉनिटर छिपकलियां, तेंदुआ, मछलीमार बिल्ली, जल पक्षी, रिडले समुद्री कछुआ
11.	दचिगाम राष्ट्रीय उद्यान	जम्मू–कश्मीर (श्रीनगर)	तेंदुआ, काला भालू, भूरा भालू, सेराव, कस्तूरी मृग, हांगुल
12.	दुधवा राष्ट्रीय उद्यान	लखीमपुर खिरी (उत्तरप्रदेश)	बाघ, तेंदुआ, मधु रीछ, सांभर, दलदली हिरण, चीतल, जंगली मुर्गी, तीतर आदि।
13.	केवलादेव घाना राष्ट्रीय उद्यान	राजस्थान (भरतपुर)	साइबेरियाई सारस, पनकौआ, धनेश, दर्वीमुख बटेर, टिकारी, बगुला, सांभर, चीतल, काला मृग, सिविट बिल्ली।
14.	पिन वैली नेशनल पार्क	हिमाचल प्रदेश	बर्फ का भेड़िया, जंगली बकरी, भूरी लोमड़ी, आई बैक्स, छोटा मारमोटा, आदि।
15.	जिम कार्बेट	उत्तरांखंड	पाण्डा, बाघ, हाथी आदि।

बाघ एवं हाथी परियोजना

1973 में देश में बाघ परियोजना प्रारंभ की गई। इसके मुख्य उद्देश्य बाघों की व्यावहारिक संख्या से आश्वस्त होते हुए संरक्षित करना है। हाथियों को संरक्षित करने के लिए देश में हाथी परियोजना प्रारंभ की गई। देश में 14 हाथी परियोजनाएँ चल रही हैं।

जैवमण्डल संरक्षित क्षेत्र

देश में पारिस्थितिकी तन्त्र के संरक्षण एवं आनुवांशिकी विविधता को सुरक्षित करने के उद्देश्य से जैवमण्डल संरक्षित क्षेत्रों की स्थापना की गई हैं। वर्तमान में देश में 14 जीवमण्डल संरक्षित क्षेत्र स्थापित किये गये है।

ह्यूमस – पेड़ पौधों और जीव जन्तुओं के सड़े गले अवशेषों को ह्यूमस कहते है। यह मृदा को उपजाऊ बनाता है तथा ऊपरी मृदा में पाया जाता है।

मृदा परिच्छेदिका – मृदा के क्रमिक क्षैतिज परतों, विन्यास और उनकी स्थितियों को दिखलाने वाले उर्ध्व काट को मृदा परिच्छेदिका कहते हैं।

मृदाक्षय – मिट्टी की उर्वरता में कमी को मृदाक्षय कहते हैं।

मृदा अपरदन – बहते हुए जल अथवा वायु द्वारा मृदा के आवरण का हटना।

मृदा संरक्षण – मिट्टी के अपरदन या क्षय को रोकना ही मृदा का संरक्षण है।

अपक्षरण – जिसमें मौसमी तत्वों के कारण धरातल पर होने वाली चट्टानों की टूट-फूट है।

भू-पृष्ठीय जल – धरातल या भूपटल पर पाया जाने वाला जल।

बधिकाएँ – मिट्टी अपरदन के क्षेत्रों में मिट्टी की मेड़ बनाना बधिकाएँ कहलाता है।

प्रवेश्य चट्टानें – ऐसी चट्टानें जिनमें भूपृष्ठीय जल प्रवेश कर जाए।

अप्रवेश्य चट्टानें – ऐसी चट्टानें जिनमें भूपृष्ठीय जल प्रवेश न कर पाए।

जलसंभर क्षेत्र – जल से भरे रहने वाले क्षेत्र।

अभ्यास

सही विकल्प चुनिए -

1. कौन-सा कारक मृदा के निर्माण में सहयोगी नहीं है –
   (i) वायु और जल (ii) सड़े-गले पेड़-पौधे तथा जीव-जन्तु
   (iii) शैल और तापमान (iv) पानी का इकट्ठा होना

2. आन्ध्रप्रदेश और उड़ीसा के डेल्टा क्षेत्रों तथा गंगा के मैदानों में सामान्यत: कौन-सी मिट्टी पाई जाती है-
   (i) लाल मिट्टी (ii) जलोढ़ मिट्टी
   (ii) काली मिट्टी (iv) लैटेराइट मिट्टी

3. मृदा संरक्षण के लिए समोच्च रेखा बन्ध बनाने की विधि प्राय: किस क्षेत्र में उपयोग में लाई जाती है –
   (i) डेल्टा प्रदेश (ii) पठारी प्रदेश
   (iii) पहाड़ी (iv) मैदानी क्षेत्र

4. मानव सर्वाधिक उपयोग करता है –
   (i) भौम जल (ii) महासागरीय जल
   (iii) पृष्ठीय जल (iv) वायुमंडलीय जल

5. केवला देव घाना पक्षी विहार स्थित है –
   (i) केरल में (ii) राजस्थान में
   (iii) पश्चिमी बंगाल में (iv) मध्यप्रदेश में

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. संयुक्त वन प्रबन्धन व्यवस्था में ..... का महत्वपूर्ण स्थान है।
2. सामाजिक वानिकी योजना को ..... से वित्तीय सहायता प्राप्त हो रही है।
3. वन अग्नि नियन्त्रण परियोजना ..... के सहयोग से संचालित है।
4. वन्य जीवों की सुरक्षा एवं संरक्षण हेतु ..... एवं ..... की स्थापना की गई है।

सही जोड़ी मिलाइए -

1.	कार्बेट	–	उत्तराखण्ड
2.	दचिगाम	–	असम
3.	मानस	–	जम्मू एवं कश्मीर
4.	पेरियार	–	चंद्रपुर
5.	वन अग्नि नियन्त्रण परियोजना	–	केरल

अतिलघुउत्तरीय प्रश्न -

1. मृदा अपरदन से क्या तात्पर्य है?
2. मृदा संरक्षण से आप क्या समझते हैं?
3. भौम जल पाने के स्रोत क्या हैं?
4. संशोधित वन नीति 1988 का मुख्य आधार क्या है?
5. सामाजिक वानिकी योजना की सफलता का आधार क्या है?
6. भारतीय वन प्रबन्ध संस्थान की स्थापना क्यों की गई है?

लघुउत्तरीय प्रश्न -

1. मृदा–परिच्छेदिका से क्या तात्पर्य है स्पष्ट कीजिए।
2. मानव जीवन में मृदा का क्या महत्व है? समझाइए।
3. लाल मिट्टी एवं लैटेराइट मिट्टी में अंतर स्पष्ट कीजिए।
4. जल संरक्षण के प्रमुख उपाय क्या हैं?
5. वर्षा जल का संग्रहण क्यों जरुरी है?
6. वनों का संरक्षण क्यों आवश्यक है?
7. वन आधारित उद्योगों का उल्लेख कीजिए।
8. वन जलवायु को कैसे नियन्त्रित करते हैं?
9. दिसम्बर 1988 की वन नीति की प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।
10. सामाजिक वानिकी योजना क्या है?

दीर्घउत्तरीय प्रश्न-

1. भारत में मिट्टियों के विभिन्न प्रकार, उनकी विशेषताएं एवं वितरण को स्पष्ट कीजिए।

2. मृदा अपरदन के कारण तथा संरक्षण के प्रमुख तरीकों की व्याख्या कीजिए।

3. मृदा-परिच्छेदिका का नामांकित चित्र बनाइए।

4. जल संसाधन के प्रमुख स्रोत क्या हैं? जल संसाधन का मानव जीवन में क्या महत्व है?

5. जल संरक्षण क्यों आवश्यक है? इसके उपायों का वर्णन कीजिए।

6. वनों से होने वाले प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लाभ कौन-कौन से हैं? वर्णन कीजिए।

7. सरकार द्वारा वन संरक्षण के लिए किये गये प्रयासों का वर्णन कीजिए।

8 वन्य प्राणी संरक्षण क्यों आवश्यक है। वन्यप्राणी संरक्षण के उपाय बताइए।

प्रायोजना कार्य -

- अपने क्षेत्र के भौगोलिक भ्रमण का कार्यक्रम तैयार करिए एवं निम्न बिन्दुओं पर तथ्यात्मक जानकारी एकत्रित कीजिए-

1. आपके क्षेत्र की मिट्टी किस प्रकार की है एवं उसकी प्रमुख विशेषताएँ क्या-क्या हैं?

2. आपके क्षेत्र की मिट्टी अपरदन के प्रमुख कारण कौन-कौन से हैं चिह्नित कीजिए।

3. इस क्षेत्र की मिट्टी में मृदा क्षरण को रोकने हेतु कौन-कौन से प्रयास कारगर हो सकते हैं?

4. वहाँ पाई जाने वाली फसलों को देखकर मिट्टी की प्रमुख विशेषताओं को चिह्नित कीजिए।

- भारत के रेखा मानचित्र में निम्नांकित को दर्शाइये -

  काजीरंगा, गिर, जिम, केवलादेव, सिमलीपाल राष्ट्रीय उद्यान, सुन्दरवन, रणथम्भौर, सरिस्का, मानस, कार्वेट बाघ परियोजना स्थल, नीलगिरि, नन्दादेवी, ग्रेटनिकोवार, पचमढ़ी, जैवमण्डल आरक्षित क्षेत्र।

- किसी एक राष्ट्रीय उद्यान का भ्रमण कीजिये एवं निम्न बिन्दुओं पर प्रतिवेदन तैयार कीजिए-

1. पाये जाने वाले जीव-जन्तु।

2. जीव-जन्तुओं के आवास स्थल।

3. भोज्य पदार्थ एवं सामग्री, शिकार के तरीके।

4. संग्रहित की जाने वाली वस्तुएँ।